International Journal of Applied Research 2018; 4(1): 524-526

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2018; 4(1): 524-526
www.allresearchjournal.com
Received: 18-11-2017
Accepted: 24-12-2017

संगीता कुमारी झा
शोधार्थी, विश्वविद्यालय,
हिन्दी–विभाग, ल.ना. मिथिला
विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार,
भारत

Corresponding Author:
संगीता कुमारी झा
शोधार्थी, विश्वविद्यालय,
हिन्दी–विभाग, ल.ना. मिथिला
विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार,
भारत

तुलसीदासजी कृत 'दोहावली' का कलात्मक वैशिष्टय

संगीता कुमारी झा

सारांश
तुलसीदास मुख्यतः एक भक्त थे इसलिए उन्होंने न तो प्रत्यक्ष रूप से काव्य का शास्त्रीय विवेचन–विश्लेषण किया और न कवि के रूप को अपनी रचनाओं में प्रमुखता दी। 'मानस' में तो उन्होंने घोषणा ही कर दी है–''कवित विवेक एक नहि मोरे'' तथा ''कवि न होऊँ नहि चातुर कहाबहुँ'' यहाँ उन्होंने स्पष्ट कर दिया है कि 'काव्य–विवेक' और 'काव्य–चातुरी से उनकी कविता भिन्न है। राम की यशोगाथा गाते हुए तुलसीदासजी ने प्रसंगवश काव्यादर्शों का निराकरण किया है। गोस्वामीजी ने काव्य में भावाभिव्यक्ति के समान ही कला–पक्ष को भी महत्व प्रदान किया है। पर यह स्पष्ट है कि उन्होंने काव्य–रचना में कला–पक्ष को जानबूझ कर महत्व नहीं दिया, अपितु यह अनायास ही निःश्रित होता चला गया।
तुलसीदास एक समन्वयवादी कवि थे। उन्होंने जिस प्रकार भक्ति धर्म, दर्शन और सम्प्रदायिक मान्यताओं के क्षेत्र में समन्वय स्थापित किया, उसी प्रकार उन्होंने काव्य में भाव–पक्ष एवं कला–पक्ष के सुन्दर समन्वय द्वारा काव्य–रचना को श्रेष्ठ आदर्श प्रस्तुत किया।
किसी भी रचना के अभिव्यक्ति–पक्ष से संबंधित जिन विशेषताओं की चर्चा की जाती है, उन्हें समग्ररूप में अभिव्यक्ति–पक्ष या शिल्प–पक्ष या कला–पक्ष की संज्ञा दी जाती है। कला–पक्ष के अन्तर्गत् मुख्यतः वर्णन शैली, अलंकार, गुण, दोष छन्द भाषा आदि पर विचार किया जाता है। डॉ0 उदयमानु सिंह कहते है–''प्रति पाद्य बस्तु की आनन्द विद्याचिनी–विद्यायिनी अभिव्यंजना–शैली कला है। विभाव आदि का उचित संयोजन, व्यवस्थित वस्तु–विन्यास ध्वनि–वक्रोन्ति, गुण–वृति, अलंकार, चित्रात्मकता उपर्युक्त छन्द आदि कला–पक्ष की विशेषताएँ हैं।''

प्रस्तावना
कुशल कवि शब्दों की योग्यता, आकांक्षा और सन्निधि का सम्यक् ध्यान रखते हुए अपनी रचना में उनका यथाचित विन्यास करता है। इस मूल सिद्धांत की अपेक्षा से काव्य में अनेक प्रकार के दोष आ जाते हैं– अप्रतीतत्व न्यूनपदत्व, विधेयाविमर्श आदि। काव्य–सौष्ठ के विशेषज्ञ तुलसी ने शब्दार्थ–नियोजन के इस धर्म का निपुणता के साथ निर्वाह किया है। उनका प्रतिपाद्य निश्चित है, और उनकी नपी–तुली शब्दावली उस प्रतिपाद्य अर्थ के संप्रेषण में सर्वथा समर्थ है। उदाहरण के लिए निम्न पंक्ति प्रस्तुत है–

''रामबाम दिसि जानकी लखन दाहिनी ओर।
ध्यान सकल कल्यानय सुरतरू तुलसी तोर।।

भगवान श्री राम की बाई और श्री जानकी जी हैं और दाहिनी ओर श्री लक्ष्मण जी हैं–यह ध्यान सम्पूर्ण रूप से कल्याणमय है। हे तुलसी! तेरे लिए यह मनमाना फल देने वाला कल्पवृक्ष है।
सटीक शब्द की सबसे सीधी पहचान यह है कि उन शब्दों के स्थान पर दुसरे शब्द नहीं रखे जा सकते। जैसे–

एक भरोसो, एकबल एक आस विस्वास
एक राम–घनस्याम हित चातक तुलसीदास।।

अर्ध–व्यंजना का व्यापार शब्द–शक्ति द्वारा संचालित होता है। उसके तीन प्रकार माने गए हैं– उभिधा, लक्षणा और व्यंजना। तद्नुसार शब्दों में तीन भेद हैं–वाचक, लक्षक और व्यंजक। उनके द्वारा प्रतीत अर्थ है– वाच्य, लक्ष्य और व्यंग्य। व्यंग्य प्रधान काव्य श्रेष्ठ है। परन्तु अमिधा का महत्व भी कम नहीं है। वह लक्षणा और व्यंजना दोनों का मूलाधार है। लक्ष्यार्थ सदैव वाच्य से संबद्ध होता है, इसलिए लक्षणा को 'अमिद्या पुच्छभूता कहा गया है। व्यंग्य के संलक्ष्य–क्रम का जो निरूपण किया गया है वह वाच्य से लेकर व्यंग्य तक की शेष प्रक्रिया का द्योतक है।

इनके काव्य में तीनों शब्द–शक्तियों को चमत्कार–विद्यायिनी–योजना पाई जाती है। उदाहरणार्थ, निम्नाक्ति पंक्तियों में अभिधा के माध्यम से रमणीय अर्थ का प्रतिपादन किया गया है–

राम राज राजत सकल धरम–निरत नर–नारि
राग न रोष न दोष दुख, सुलभ पदारथ चारि।।

तुलसी दास का काव्य ध्वनि–काव्य है, क्योंकि उसमें वाच्य की अपेक्षा व्यंग्यार्थ अधिक चमत्कारपूर्ण है। उसमें ध्वनि के विविध रूपों का उत्कृष्ट निर्देशन मिलता है। ध्वनि के मुख्य दो भेद हैं– असंलक्षयक्रम–व्यंग्य और संलक्ष्य–क्रम व्यंग्य।

दोहावली में इसका अच्छा ध्यान रखा गया है रसवादियों के अनुसार गुण रस के धर्म हैं। रसानुभूति की चितावस्थाएँ हैं, परन्तु गुण–व्यंजक पदावली के लिए भी उनका लाक्षणिक व्यवहार किया जाता है। माधुर्य का संबंध रति करूणा आदि कोमल भावों से है। जिस रचना से भावक का चित द्रुत होकर रसानुभूति करता है वह माधुर्य गुण–युक्त है जैसे–दोहावली का यह पद द्रष्टव्य है–

मुख मीठे, मानस मलिन,
कोकिल मोर चकोर।
सुजस–धवल चातक नवल।
रहो भुबन भरि तोर।

तुलसीदास कहते हैं कि कोयल, मोर और चकोर केवल मुँह के मीठे होते हैं, लेकिन उनके मन में मैल भरा होता है, परन्तु हे चातक संसार में केवल तेरा ही निर्मल यश छाया हुआ है।

प्रसाद–गुण विशिष्ट वृतियों से युक्त अन्तः करण की प्रसन्नता है। रसानुभूति के लिए चित की यह दशा अनिवार्य है। काव्यशास्त्र में वहीं रचना प्रसाद–गुण–युक्त मानी गयी है, जिसके अर्थ–ग्रहण में कोई कठिनाई न हो, जिसको पढ़ते या सुनते ही चित प्रसन्न हो जाए और तत्काल आनन्द की अनुभूति होने लगे।

तुलसीदासजी ने काव्य में समस्त प्रचलित सिद्धांतों की उपयोगिता मानते हुए भी काव्य के प्रसादगुण के खासकर दोहावली में विशेष मान्यता दी है तथा यह स्वीकार किया है कि कविता रूपी मुक्तामणि के लिए हृदय को सिन्धुसा गम्भीर, बुद्धि को सीप–सी ग्रहिणी तथा वाणी को स्वाति–सा दुलर्भ होना चाहिए। 'दोहावली' में कवि ने कहा है–

सुनरे तुलसीदास, व्यास पपीहर्हि प्रेम की
परिहरि चारिउ मास, जो अँचवै जल स्वाति को।।

गोस्वामीजी ने दोहावली में जिन भावों का वर्णन किया है उनमें पूरी गहराई एवं तीव्रता के दर्शन होते हैं। उनके द्वारा वर्णित प्रेमभाव जहाँ चातक के आदर्श प्रेम के द्वारा प्रेम की अनन्यता का वर्णन करता है वहाँ प्रसाद गुण अपने पूर्ण उत्कर्ष में उपलब्ध है।

तुलसीदास मुख्यतया प्रसाद के कवि हैं। उन्होंने भावानुसार यथास्थान माधुर्य और ओज की निवन्धता की है। भक्ति–भावना से ओत–प्रोत होने के कारण उनके काव्य में माधुर्य की अतिश्यता है। जनभाषा की प्रवृति के अनुसार उनकी सहजाभिव्यक्ति में कोंमला या ग्राम्य वृत्ति की प्रधानता है। अधिक कलात्मक अथवा अलंकृत स्थलों पर कोमल–कांत उपनागरिका एवं दीप्तिकठोर परूषावृत्तियों का उचित विनिवेश किया गया है।

काव्य के शोभादायक धर्मों को अलंकार कहते हैं। महाकवियों की वाणी स्वभावतः ही अलंकार सम्पन्न होती है, क्योंकि रस में दत्तचित प्रतिभावन कवि के सामने अलंकार में होड़ लगाकर स्वयं पीछे चले आते है। तुलसी काव्य भावों के सहज उछलन की परिणति है। भावावेशों की सहजाभिव्यक्ति है।

अतः इनके साहित्य में अलंकारों की प्रचुरता होना स्वाभाविक है। इनके काव्य में अनुप्रास, उपमा, अर्थान्तरन्यास और दृष्टान्त के अतिरिक्त रूपक और उत्प्रेक्षा का सर्वाधिक प्रयोग है। गोस्वामी तुलसीदास रूपक के बादशाह हैं। अलंकारों के प्रयोग में उनकी निजी काव्य–कुशलता का परिचय मिलता है।

दोहावली में प्रयुक्त अलंकारों में अनुप्रास, उपमा, रूपक, उत्प्रक्षा, काव्यलिंग, तथा स्वभावोक्ति का सुन्दर प्रयोग किया गया है। जैसे–

तुलसी जाने सुनि समुझि, कृपा सिंधु रघुनाथ।
महँगे मनि कंचन किए, सौंधे जग, जल नाज।।

गोस्वामी तुलसीदास का सर्वाधिक प्रिय छन्द 'दोहा' है। इसीलिए उन्होंने इस छन्द में एक स्वतंत्र पुस्तक ही रच दिया–'दोहावली'। छन्द संगीतात्मकता के द्वारा काव्य को सरसता ही प्रदान नहीं करता वरन् उसे अमर भी बना देता है।

दोहा प्राचीन अर्द्धसम मात्रिक छन्दों में से एक है। इसके विषम चरणों में 13–13 एवं समचरणों में 11–11 मात्राएँ होती है। विषम चरणों के अन्त में प्रायः लघु–गुरूक्रम (15) या सगण (116) पाया जाता है। सम चरणों में अन्तिम तीन मात्राओं की योजना अनिवार्यतः गुरू लघु (61) क्रम से होती है। यथा–

हम हमार आचार बड़, भरिभार धरि सीस।
हठि सठ परबस परत जिमिकीर, कोस, कृमि कीस।।

वैसे तो हिन्दी साहित्य का सर्वाधिक रससिद्ध और प्रसिद्ध छन्द है–चौपाई। जिसमें इन्होंने अपने गौरवग्रंथ 'रामचरितमानस' की रचना की है।

इसके अतिरिक्त अन्यान्य छन्दों में कवि की सचेष्टता न्यून है। सच तो यह है कि उनकी कीर्ति का मूलाधार रामचरितमानस है। इनकी दोहा–चौपाई शैली पर प्रेम मार्गी कवि मल्लिक मुहम्मद जायसी का स्पष्ट प्रभाव है।

मुक्तक काव्य की संगीतात्मकता, आत्माभि व्यंजना, भावान्विति सहज अन्त, प्रेरणा, शैलीगत स्वाभाविकता, भाषा की सुकुमारता आदि तत्वों का समावेश कर तुलसीदास ने काव्य की आत्मा का उत्कर्ष भी किया है और शरीर का श्रृंगार भी। भाव और कला का यह विलक्षण समन्वय कवि की प्रतिभा का ज्वलन्त प्रमाण है।

तुलसीदास के काव्यों की एक और बड़ी विशेषता यह है कि उनका सम्पूर्ण जीवन तीर्थाटन और घुमक्कड़ी में बीता। वे अर्द्धशिक्षित अल्पशिक्षित और अशिक्षित किसानों के सहायक मित्र थे। वे उनमें घुले–मिले थे। इसलिए ग्रामीण लोक जीवन के मर्म का एक अनिवार्य प्रभाव उनके काव्यों में है।

'दोहावली' में तुलसीदासजी ने मुलतः 'ब्रज' भाषा का प्रयोग किया है। यहाँ उनकी भाषा बड़ी परिमार्जित एवं सुगठित है। तुलसीदासजी की भाषा में स्वामिकता इतनी अधिक है कि यह प्रतीत ही नहीं होता कि इसमें अन्य देशी और विदेशी शब्द भी विद्यामान है। यहाँ कवि ने अनेक प्रमाणित और अप्रमाणित शब्दों को ब्रज का बाना पहचान दिया है। संस्कृत तथा प्राकृत भी कुछ अप्रचलित शब्द यहाँ दीख पड़ते हैं, लेकिन इतने पर भी दुरूहता कहीं नहीं पायी जाती है। तुलसीदास की भाषा की सबसे वड़ी विशेषता उसका सर्वथा भावानुकुल होना रहा है। इसमें उत्तम भाषा के तीनों गुण–ओज, प्रसाद और माधुर्य दृष्टिगोचर होते हैं तथा लोकोक्तियों और मुहावरों के प्रयोग में भी कवि को यहाँ अद्वितीय सफलता प्राप्त हुई।

निष्कर्ष

दोहावली की प्रबंध–पटुता, रस–व्यंजना, अलंकार व्यंजना, तल्लीनता, भाषा–भिव्यक्ति, वर्णन–शैली और मनोहर भाव–व्यंजना

आदि सभी काव्यगत विशेषताएँ मौजूद हैं। तभी तो 'हरिओध' जीने कहा है–

कविता करके तुलसी ने लसे,
कविता लसी पा तुलसी की कला।

संदर्भ

1. रामचरितमानस (बालकाण्ड), पद सं–8
2. वही पद सं.–11
3. तुलसी काव्य मीमांसा, पृ. सं.–221 डॉ0 उदमानुसिंह
4. दोहावली–पद सं.–1
5. वही पद सं.–277
6. वही पद सं.–182
7. वही पद सं.–296
8. वही पद सं.–306
9. वही पद सं.–149
10. वही पद सं.–243